यूर्निवसिटी ऑफ हेम्बर्ग, जर्मनी के डॉ. राम प्रसाद भट्ट से खास बातचीत के अंश

महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा में विदेशी हिंदी शिक्षकों के लिए आयोजित अभिविन्यास (ओरिएंटेशन) कार्यक्रम में सहभागिता करने के लिए जर्मनी से आए डॉ. रामप्रसाद भट्ट ने एक खास मुलाकात में कहा कि 'भारत में मैं स्वयं ही जीना चाहता,

काश। कोई मूर्तिकार न होता...
हम और क्या आनन्ददायक जानना चाहते हैं
शाकुन्तला, नल, उनको चूमना चाहिए
और मेघदूत, वह संदेशवाहक
कौन उसे अपनी प्रियतमा के पास नहीं भेजना चाहेगा।'

उपर्युक्त पंक्तियों से स्पष्ट होता है कि महान जर्मन कवि गॉथे (गेथे) 1750-1832 ने कालीदास के नाटक शाकुन्तलम् और मेघदूत का अनुवाद पढ़ा था। वैसे तो यूरोप और दक्षिण एशिया के बीच सांस्कृतिक एवं आर्थिक संबंधों के विवरण अलेक्जेंडर के साथ 4 बी.सी. से ही मिलते हैं, किंतु भारतीय उपमहाद्वीप में यूरोपियन की दिलचस्पी मुख्यत: वाराहमिहिर, ब्रह्मदेव और भास्कर जैसे भारतीय विद्वानों द्वारा स्थापित की गई गणितीय सिद्धांतों की वजह से हुई।

भारतीय साहित्य एवं यूरोपियन साहित्य के मध्य सर्वप्रथम आदान-प्रदान संभवत: पांचवी सदी में पंचतंत्र की कहानियों के संस्कृत से फ़ारसी, अरबी, ग्रीक, हिब्रू और लैटिन के माध्यम से अनेक यूरोपियन भाषाओं में अनुवाद के रूप में शुरू हुआ था किंतु यूरोपियन विद्वानों की भारतीय साहित्य एवं संस्कृति में गहन रूचि सोलहवीं सदी से शुरू होती है। इसकी शुरूवात वास्तव में जर्मन मिशनरियों द्वारा संस्कृत भाषा सीखने और उसका व्याकरण लिखने के साथ हुई थी।

18वीं सदी में भारतीय क्लासिकल साहित्य का यूरोप में उत्साहवर्धक स्वागत हुआ और इसी के साथ भारतीय साहित्य को उसकी मूल भाषाओं में समझने के प्रयास भी शुरू होते हैं। चूंकि जर्मनी का भारतीय उपमहाद्वीप में इंगलैण्ड और फ्रांस के जैसे कोई उपनिवेशवादी इरादा नहीं था, अत: जर्मन विद्वानों ने अपने आपको सिर्फ भारतीय साहित्य, फिलॉसफी और धर्म संबंधी अध्ययन एवं शोधकार्यों तक ही सीमित रखा। इसका परिणाम यह हुआ कि जर्मनी भारत विद्या पर कार्य करनेवाले देशों की अग्रगण्य श्रेणी में आ गया। प्रथम संस्कृत-अंग्रेजी शब्दकोश यद्यपि सेंटपीटर्सबर्ग में तैयार किया गया किंतु विद्वान जर्मन थे।

जर्मन विश्वविद्यालयों में भारतीय विद्या की सर्वप्रथम चेयर बोन विश्वविद्यालय में 1818 में शुरू की गई और औगुस्त विल्हेल्म वॉन जर्मन इण्डोलॉजी के प्रथम प्रोफेसर बनाए गए। उन्होंने भगवतगीता का जर्मन अनुवाद देवनागरी

लिपि के साथ छपवाया था। यह इस तरह का प्रथम प्रयास था। उनकी पुस्तिका ''भारतीयों की भाषा और उनकी विद्वता'' सभी यूरोपियन इण्डोलॉजिस्टों के लिए मुख्य विवरण पुस्तिका का कार्य करती रही है। उन्नीसवीं सदी की प्रथम अर्द्ध शताब्दी में फ्रांज़ बॉप (1791-1867) ने संस्कृत, जरमैनिक एवं ईरानी के भाषा वैज्ञानिक संबंध को स्थापित करके भारतीय भाषाओं एवं साहित्य में यूरोपियन विद्वानों की रूचि को और भी बढ़ा दिया। जिसके फलस्वरूप इस दिशा में तुलनात्मक अध्ययन को दिशा मिल पायी।

उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य में जर्मनी में ओरेन्टियल भाषाओं का सेमिनार स्थापित करने के लिए विद्वानों और राजनेताओं में गहन बहस छिड़ी और तीन अप्रैल 1886 को इससे संबंधित प्रस्ताव जर्मन संसद में लाया गया, तो तात्कालीन चांसलर विस्मार्क द्वारा इसे हरी झण्डी दी गई थी। छह अक्टूबर 1887 को बर्लिन में एक ऑरेन्टियल संस्थान ''एशिया और अफ्रीका का इतिहास'' की स्थापना की गई, जिसमें दैनिक जीवन में प्रयोग की जाने वाली ओरेन्टियल भाषाओं का अध्यापन करना था। इस सेमिनार में मुख्यत: हिन्दुस्तानी, चीनी, जापानी, अरबी, फ़ारसी और तुर्की का अध्यापन किया जाता था।

यद्यपि बर्लिन के ओरेन्टियल संस्थान में हिन्दुस्तानी व गुजराती भाषाएं सन् 1888 से ही पढ़ाई जा रही थीं किंतु आधुनिक भारतीय साहित्य की ओर यूरोपियन विद्वानों का ध्यान सिर्फ टैगोर को सन् 1913 में नोबेल पुरस्कार मिलने के पश्चात ही गया। इसी के माध्यम भारतीस साहित्य के समानान्तर आधुनिक भारतीय साहित्य की जीवन्तता, स्पष्टता, निरन्तरता एवं परंपरागत साहित्य श्रृजनता के स्वरूप का चित्र यूरोपियन विद्वानों के सामने स्पष्ट रूप से सामने आया।

विश्वविद्यालय स्तर पर जर्मनी में हिंदी की पढ़ाई सन् 1934 के बाद ही शुरू हो पायी। हिंदी का महत्व जर्मनी में द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात ही बढ़ने लगा और वह भी विशेषकर बीसवीं सदी के पांचवें दशक में। इस बात के भी प्रमाण मिलते हैं कि हिटलर ने भारतीय भाषाओं के कोर्स कूटनीतिक कारणों से शुरू करवाये थे। 1929-1930 के लगभग नाज़ी विद्वानों ने प्रथम विश्व युद्ध में बंदी बनाए गए हिन्दुस्तानी सैनिकों पर कुछ भाषा वैज्ञानिक प्रयोग भी किये थे।

बीसवीं सदी का हिंदी साहित्य जर्मनी में अ.फ़िन्दाइस के द्वारा आंशिक रूप में प्रस्तुत किया गया था जबकि एच.हॉफमन ने मध्यकालीन साहित्य पर टिप्पणियां लिखी थीं। क्लासिकल इण्डोलॉजी के कुछ विद्वानों जैसे- फ्रीडरिक रोजन(1887-1890), हेलमूत वॉन ग्लाजनाप्प (1921-1928), लुदविग अल्सदोर्फ (1940-1945), पॉल हाकर (1913-1979) ने भी हिंदी पर काम किया था।

वास्तव में जर्मनी में हिंदी साहित्य पर गंभीरता से कार्य होना बीसवीं सदी के छठे दशक में शुरू हो पाया। उस समय के प्रमुख विद्वानों में लोथार लुत्ज़ेख हेल्मूथ नेस्पिताल, मारगोत गत्ज़लाफ़, मोनिका तेतलबाख इत्यादि के नाम प्रमुखता से लिए जा सकते हैं। इन विद्वानों ने प्रेमचंद, अज्ञेय, मोहन राकेश, भीष्म साहनी, निर्मल वर्मा, कमलेश्वर, यशपाल, अमृतलाल नागर आदि हिंदी लेखकों की कृतियों का जर्मन अनुवाद किया और उन पर शोधकार्य भी करवाए। नवें दशक से हिंदी काव्य साहित्य पर भी अनेक शोध प्रबंध लिखे गए और अनेक छोटे अनुवाद भी सामने आए हैं।

वर्तमान में हिंदी का अध्यापन जर्मनी के कम से कम 15 विश्वविद्यालयों में किया जा रहा है किंतु आधुनिक भारतीय भाषाओं एवं साहित्य के पूरी जर्मनी में सिर्फ तीन ही विश्वविद्यालयों- हम्बुर्ग, हाइडेलबेर्ग एवं हाले में ही आधुनिक भारत विद्या की विभाग हैं, जहां बी.ए. से लेकर पी-एच.डी. स्तर तक के अध्ययन-अध्यापन की सुविधाएं उपलब्ध हैं। गत कुछ वर्षों से धनाभाव की वजह से जर्मन राज्य सरकारों ने भारत विद्या संस्थानों को बंद कर दिया है, जिनमें हिंदी पढ़ाई जा रही थी। इनमें बोखुम, क्लॉन, कील, फ्राइबुर्ग, म्युन्स्तर इत्यादि संस्थानों का नाम प्रमुखता से लिया जा सकता है। कुछ संस्थानों में अध्यापकों के पद काट दिए गए हैं और संस्थान को अन्य संस्थानों में समाहित कर दिया गया है।

जब से भारत ने सन् 2006 में फ्रैंकफुर्त पुस्तक प्रदर्शनी में पार्टनर देश के रूप में भाग लिया, तब से जर्मनी में हिंदी के प्रति लोगों में दिलचस्पी बढ़ रही है। इसका श्रेय एक सीमा तक हिंदी फिल्मों को भी जाता है। प्रदर्शनी के अवसर पर हिंदी की सोलह कृतियों को औपचारिक रूप से जर्मन अनुवाद के लिए स्वीकार किया गया था और खुशी की बात यह भी है कि आजकल अनेक हिंदी कृतियों का जर्मन अनुवाद किया जा रहा है। अनुवाद ख़ासकर हिंदी कहानी, उपन्यास, कविता, एकांकी इत्यादि विधाओं में किया जा रहा है। हिंदी से जर्मन में अब तक जिन साहित्यकारों की कृतियां अनुदित हुई हैं अथवा हो रही है, उनमें कबीर, प्रसाद, पंत, निराला, महादेवी, प्रेमचंद, अज्ञेय, भीष्म साहनी, मोहन राकेश, रेणु, वृंदावनलाल वर्मा, श्रीलाल शुक्ल, निर्मल वर्मा, अलका सरावगी, बेबी हलधर, उदय प्रकाश, गंगा प्रसाद 'विमल', ओमप्रकाश वाल्मिकि, गीतांजली श्री इत्यादि का नाम प्रमुखता से लिया जा सकता है। वास्तव में अनुवाद सांस्कृतिक व्यापार की प्रकृति

का एक विश्वसनीय सूचक भी है, जो विभिन्न सांस्कृतिक वर्गों के मध्य घटित होता है। अत: इस तरह के कार्यों को प्रोत्साहन दिया जाना परमावश्यक है।

जर्मनी में हिंदी का शिक्षण सरकारी एवं निजी संस्थान, निजी स्तर पर एवं ऑनलाइन के स्तरों पर हो रहा है। विश्वविद्यालयों में पढ़ रहे छात्र एवं छात्राएं सभी कुछ समय के लिए हिंदी सीखने अथवा हिंदी का अभ्यास करने भारत आते हैं। किंतु दुर्भाग्य यह है कि भारत में अधिकतर लोग इन विद्यार्थियों से हिंदी में बात न करके अंग्रेज़ी में बात करने लगते हैं। चाहे उन्हें अंग्रेज़ी का ठीक से ज्ञान हो या न हो। यहां तक कि एक रिक्शेवाला भी इन विदेशियों से अपनी टूटी-फूटी अंग्रेज़ी शब्दावली में ही बात करने की कोशिश करता है। इसके पीछे कौन से पहलू काम करते हैं, उस बहस में मैं नहीं जाना चाहूंगा। लेकिन इतना तो स्पष्ट है कि इस समस्या के लिए भारत सरकार की तुलना अन्य देशों की सरकारों से करूं तो भारत को स्केल में जगह बहुत ही नीचे मिलेगी। इसके लिए भारत सरकार की भाषा एवं साहित्य के विकास संबंधी नीतियां एवं हिंदी के लिए दिया जानेवाला बजट तथा उस पर भ्रष्टाचार व हिंदी के अध्यापकों का ईमानदारी से काम करना इत्यादि प्रमुख कारणों में गिने जा सकते हैं।

हिंदी जर्मन शब्दकोश भी बाज़ार में उपलब्ध हैं जिनमें शर्मा फ़ेरमेर का हिंदी-जर्मन कोश, मारगोत गज़लाफ़ का हिंदी-जर्मन कोश, शर्मा का जर्मन-हिंदी कोश एवं नेस्पितात का हिंदी क्रिया-कोश प्रमुख हैं।

हम्बुर्ग विश्वविद्यालय अथवा यूं कहूं कि हम्बुर्ग शहर का हिंदी, हिंदुस्तानी एवं उर्दू से नाता 97 वर्ष पुराना है। वास्तव में हम्बुर्ग शहर में 1914 में कॉलोनियल इन्स्टीट्यूट के नाम से एक भाषा संस्थान खोला गया था जो कि हम्बुर्ग विश्वविद्यालय से भी पुराना है, क्योंकि हम्बुर्ग विश्श्वविद्यालय की स्थापना 1919 में हुई थी। वर्तमान में विश्वविद्यालय में स्नातक से लेकर पोस्ट डॉक्टरेट करने की सुविधा है। विश्वविद्यालय में पिछले वर्ष इंटरनेशनल एम.ए. की पढ़ाई भी शुरू कर दी गई है। विश्वविद्यालय के भारत विद्या विभाग के पाठ्यक्रम में हिंदी भाषा के व्याकरण एवं लिपि से लेकर हिंदी साहित्य की विभिन्न विधाएं तथा बोल-चाल की भाषा से लेकर एकांकी, हिंदी फिल्म, अनुवाद एवं हिंदी मीडिया की भाषा और परंपरा इत्यादि शामिल है।

नियमित हिंदी पाठ्यक्रमों के अलावा संस्थान में हिंदी गहन अध्ययन पाठ्यक्रम एवं हिंदी सांध्यकालीन पाठ्यक्रमों का भी आयोजन किया जाता है और यह कोर्स इतना प्रसिद्ध हो गया है कि इसमें पश्चिम यूरोप के विश्वविद्यालयों के साथ-साथ व्यापारी लोग, मैनेजर्स और यहां तक कि रिटायर्ड हो चुके 65-70 साल के बुजुर्ग भी उत्साह से इस कोर्स में भाग लेते हैं। इन कोर्सों में भाग लेने वाले अधिकतर लोग भारतीय संस्कृति एवं दर्शन, समाज, खान-पान तथा आयुर्वेद में दिलचस्पी होने की वजह से हिंदी सीखते हैं लेकिन कुछ लोग ऐसे भी होते हैं जो हिंदी फिल्मों से प्रभावित होकर अथवा सिफ हिंदी फिल्में देखने के लिए हिंदी सीखते हैं। सांध्यकालीन कोर्सों में अधिकतर ऐसे लोग ही भाग लेते हैं, जिनको दिन में काम करना होता है। इन कोर्सों की खासियत यह है कि इनमें न सिर्फ व्याकरण के नियम सिखाये जाते हैं बल्कि आधुनिक भारतीय समाज और संस्कृति के बारे में भी जानकारी दी जाती है।

अंतरराष्ट्रीय हिंदी दिवस एवं अन्य अवसरों पर हम्बुर्ग विश्वविद्यालय के भारत विद्या के विद्यार्थी हिंदी में अनेक कार्यक्रम प्रस्तुत करते हैं जैसे हिंदी नाटक का मंचन, कविता पाठ, निबंध एवं भाषण प्रतियोगिता, अन्त्याक्षरी तथा हिंदी फ़िल्मी गीतों पर नृत्य आदि।

हम्बुर्ग से हिंदी एवं हिंदुस्तान के संबंध का पता इसी बात से लगाया जा सकता है कि भारत का 'राष्ट्रगान' सबसे पहले हम्बुर्ग के अटलांटिक होटल में गाया गया था, जब सुभाषचन्द्र बोस वहां पर थे। इसी तरह, 'तिरंगा' सबसे पहले जर्मनी में ही लहराया गया था और आज़ादी और उसके बाद भी भारतीयों के दिलों में छा जाने वाले श्लोगन 'जय हिंद' भी सबसे पहले जर्मनी की धरती पर ही गूंजा था।

जर्मनी में जहां एक तरफ हिंदी का धरातल पहले से थोड़ा अच्छा फूल रहा है वहीं यह भी सच है कि हिंदी अभी भी अन्य भाषाओं की अपेक्षा में, जैसे चीनी, जापानी, अरबी आदि से कही पिछड़ी हुई है। इसका कारण पहले तो उन देशों में अंग्रेजी का न बोला जाना है और दूसरा इन देशों की सरकारों एवं आम जनता द्वारा अपनी राष्ट्र अथवा राज भाषा को पूरा सम्मान देना और उसको फैलाने तथा उसका विकास करने में महत्वपूर्ण योगदान निभाते हैं। जैसे चीन ने हाल ही के कुछ वर्षों में हर देश में चीनी भाषा के प्रचार के लिए अनेकों कन्फ्यूसियस संस्थान खोल दिए हैं। हिंदी का भी इसी तरह प्रचार एवं प्रसार करने के लिए भारत सरकार विभिन्न देशों में अपने संस्थान खोलने चाहिए और हिंदी के विद्यार्थियों को वजीफ़ा देना चाहिए। आईसीसीआर के माध्यम से भेजे जाने वाले हिंदी के कुछ महाशय तो यूरोप में हंसी के पात्र बन जाते हैं। यह इस देश और हिंदी भाषा का दुर्भाग्य है कि जिनको हिंदी के व्याकरण का ज्ञान तक नहीं होता, उन्हें डिप्लोमेटिक स्टेटस देकर हिंदी का अपमान करने विदेशों में भेजा जाता है। मैं इस मंच का उपयोग करके आईसीसीआर के कर्ता-धर्ताओं से निवेदन करना चाहूंगा कि कृपया वास्तव में ऐसे लोगों को ही विदेशों में हिंदी पढ़ाने भेजें, जो वास्तव

में उसके लायक हैं। इसके लिए एक इंटरव्यू सिस्टम होना चाहिए ताकि इस तरह के भ्रष्टाचार पर रोक लग सके और हिंदी को, कम से कम हिंदी भाषा को उसका अधिकार मिल सके।

महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय द्वारा हिंदी अध्यापन की दिशा में उठाया गया अभूतपूर्व कदम अवश्य ही सराहनीय है। मुझे आशा है कि आदरणीय विभूति नारायण राय एवं प्रो. अरविंदाक्षन द्वारा शुरू किया गया यह कार्यक्रम भविष्य में इस विश्वविद्यालय की एक सशक्त परंपरा का रूप लेगी।

-अमित विश्वास